B.A. History Hon's, Part – I

Paper: I, Unit:– IV, Date:– 15.07.2020

Lession: चन्द्रगुप्त द्वितीय की उपलब्धियों का मूल्यांकन

चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य समुद्रगुप्त की रानी दत्ता देवी का पुत्र था। वह योग्य पिता का योग्य पुत्र था जिसको उसका पिता उत्तराधिकारी मनोनीत करना चाहता था। परन्तु उसकी आकस्मिक मृत्यु हो जाने के कारण उसका ज्येष्ठ पुत्र रामगुप्त ही गद्दी पर आसीन हुआ। रामगुप्त बहुत ही कायर और निकम्मा था। उसने शकों से पराजित होकर अपनी रानी ध्रुव देवी को संधि की कठोर शर्त के परिणामस्वरूप, शकों को समर्पित कर देना स्वीकार कर लिया था। परन्तु उसका छोटा भाई चन्द्रगुप्त द्वितीय इस अपमान को सहन न कर सका। उसने ध्रुव देवी से मंत्रणा करके रामगुप्त का वध कर दिया और शकों को मार भगाया। चन्द्रगुप्त द्वितीय ने विवाह कर लिया। इस प्रकार कुल को कलंकित करने वाले अपने कायर भाई रामगुप्त का वध करके चन्द्रगुप्त द्वितीय 375 ई. में गद्दी पर बैठा।

यद्यपि चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य को उत्तराधिकार में अपने माता-पिता का विशाल राज्य प्राप्त हुआ था, फिर भी उसने अपने साम्राज्य की सीमाओं की अभिवृद्धि करने हेतु तथा विशाल साम्राज्य की सुरक्षा और व्यवस्था हेतु अनेक युद्ध लड़े। वह एक वीर विजेता था। जिसने अपनी दिग्विजय के परिणामस्वरूप ही विक्रमादित्य की उपाधि धारण की थी।

अपनी विजयों के परिणामस्वरूप चन्द्रगुप्त के साम्राज्य में अत्यधिक वृद्धि हो गई थी। उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में नर्मदा नदी तथा पूरब में बंगाल तथा आसाम से लेकर पश्चिम में पंजाब तथा बाहलिक प्रदेश तक उसका साम्राज्य विस्तृत था। गुजरात तथा सौराष्ट्र के प्रदेश उसके अधीन थे।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य प्रजावत्सल सम्राट था। उसमें योग्य शासक के समस्त गुणों का समावेश था। उसका शासन बड़ा ही उदार और प्रजाहित पर आधारित था।

शासन की समस्त शक्तियों का स्रोत स्वयं सम्राट था। वह प्रधानमंत्री, प्रधान न्यायधीश तथा प्रधान सेनापति के रूप में शासन के समस्त विभागों पर अपना कठोर नियंत्रण रखता था। वह स्वेच्छाचारी शासक था। उसकी सहायता हेतु एक मंत्रीपरिषद् की व्यवस्था थी। मंत्रियों के पद सम्भवतः पैतृक होते थे। परन्तु गुप्तकालीन सम्राट मध्यकालीन सुल्तानों की भाँति निरंकुश नहीं होते थे।

सम्राट के प्रशासकीय कार्यों में सहायता तथा परामर्श देने के लिए मंत्रीपरिषद् की व्यवस्था थी। प्रधानमंत्री को मंत्रिन कहते थे। युद्ध तथा संधि के सम्बन्ध में परामर्श देनेवाला मंत्री संधि विग्रहीक कहलाता था। वह युद्ध के समय युद्ध स्थल में सम्राट के साथ उपस्थित रहता था तथा कभी-कभी स्वयं युद्ध में भाग लिया करता था। राजकीय लेखा-जोखा का संग्रह करने के लिए 'अक्ष पटल अधिकृत' नामक मंत्री होता था।

प्रशासन की सुविधा हेतु चन्द्रगुप्त का विशाल साम्राज्य

कई प्रान्तों में विभक्त था। वह प्रान्त 'देश' अथवा 'मुक्ति' कहलाते थे। प्रान्तीय शासकों को गोप्ती अथवा 'उपरिक' आदि विभिन्न नामों से सम्बोधित किया जाता था। अधिकांश प्रान्तों का शासन राजकुमारों के अधिकार में रहता था। प्रान्त प्रदेशों अथवा विषयों में विभक्त थे। विषय का शासक 'विषयपति' कहलाता था। प्रशासन का सबसे छोटी इकाई गाँव था जिसका शासन 'ग्रामिक' नामक अधिकारी करता था, जो सम्भवतः अवैतनिक कर्मचारी था। उसकी सहायता हेतु ग्राम पंचायत की भी व्यवस्था थी।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की गणना भारत के महानतम सफल शासकों में की जाती है। वह एक साहसी, वीर तथा महान विजेता था। शकों और वाह्लीकों को पराजित करके अपने साम्राज्य की सीमाओं में वृद्धि की। मध्यप्रदेश के गणराज्यों तथा दक्षिण भारत के राज्यों को पराजित किया तथा पूर्व संघशक्ति का विनाश कर गुप्तों की प्रतिष्ठा में वृद्धि की।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य एक कुशल राजनीतिज्ञ था। उसने संबंधों द्वारा अपनी राजनीतिक स्थितियों को सुदृढ़ बनाया। उसने अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु नारी वेश धारण करके शक राजा की हत्या की तथा अपने बड़े भाई रामगुप्त की पत्नी ध्रुव देवी से मिलकर षड्यन्त्रपूर्वक रामगुप्त का वध करके सिंहासन पर अधिकार कर लिया था।

चन्द्रगुप्त एक योग्य तथा महान शासक था जिसने अपनी योग्यता द्वारा शासक को दृढ़ता प्रदान करके प्रजा को सुख प्रदान किया। फाह्यान ने उसकी शासन-व्यवस्था की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। वह बड़ा ही न्यायप्रिय था। प्रजा उससे अधिक प्रेम करते थे।

वह बड़ा ही दयालु तथा प्रजा हितकारी शासक था। उसकी जनता प्रजा सुखी थी। उसके प्रजाहितकारी शासन में ही गुप्तकाल के स्वर्णयुग की स्थापना हो सकी।

उपर्युक्त वर्णन के आधार पर निष्कर्षतः चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य एक महान विजेता, उच्चकोटि का राजनीतिज्ञ तथा कुशल प्रबंधक था जिसके शासन काल में भारत का बहिर्मुखी विकास हुआ।

डा० शंकर जम किशन चौधरी
अतिथि शिक्षक, इतिहास विभाग
डी० बी० कॉलेज, जामनगर

B.A. History Hon's, Part-I

Paper: I, Unit: III, Date: 15.07.2020

Lession: सातवाहन काल की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक दशा

सातवाहन सभ्यता एवं संस्कृति की जानकारी हमें मुख्यतः अभिलेखों से होती है। इसके अलावा साहित्य, स्मारकों एवं सिक्कों से भी हमें मदद मिलती है। हमें उस समय की सभ्यता एवं संस्कृति का सुस्पष्ट चित्र प्राप्त हो जाता है।

राजनैतिक दशा: सम्राट का पद परम्परागत होता था, किन्तु सम्राट निरंकुश नहीं था। उसकी सत्ता पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए पौर सभायें होती थी। जनपद के लिए राज्यपाल होते थे। इसके अतिरिक्त साम्राज्य में अनेक गणराज्य, निकाय, ग्राम तथा श्रेणी होते थे जिनके पृथक-पृथक अधिकारी होते थे तथा ये सब अपनी आन्तरिक समस्याओं का समाधान करने में स्वतंत्र होते थे।

सेना चार भागों में विभाजित थी तथा उनका संगठन उत्तम था। नगरों को बड़ी दीवारों, परकोटों तथा दरवाजों द्वारा सुरक्षित रखा जाता था।

सामाजिक दशा: जाति प्रथा तथा जाति शुद्धता प्रचलित थी, जो हमें गौतमीपुत्र सातकर्णी के अभिलेखों से पता चलता है। हिन्दु समाज व्यवसाय के आधार पर चार वर्गों में विभाजित था। उच्च श्रेणी में महाभोज और महा-सेनापति आते थे। मध्य श्रेणी में अमात्य, महामात्र और भण्डागारिक आते थे तथा निम्न श्रेणी में लेखक, वैद्य, हालकीय (किसान), स्वर्णकार, गान्धिक, वर्धकी (बढ़ई), मालाकार, लोहवणिज (लुहार) तथा दासक (मछुआ) आते थे।

संयुक्त परिवार प्रथा थी। कुटुम्ब के मुखिया का अपना महत्व होता था और उसे गृहपति या कुटुम्बिन कहा जाता था। सातवाहनों के समाज में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रीति का प्रचलन दृष्टिगोचर होता है। माता के नाम पर सम्राट अपना नाम घोषित करते थे।

धार्मिक दशा: इस युग में ब्राह्मण धर्म बहुत फला-फूला। यज्ञों की बाहुल्यता हुई। वैष्णव और शैव धर्मों का उदय हुआ। धार्मिक उदारता थी। बौद्ध एवं जैन भिक्षुओं को अनेक गुफायें दान दी गयीं। ये भिक्षु जनता को सदाचार की शिक्षा देते थे। लोगों को धार्मिक स्वतंत्रता थी। इस समय की मुख्य विशेषता यह थी कि अलग-अलग प्रकार के धर्म अंगीकार करने के बाद भी लोगों को अपनी जाति से वंचित नहीं होना पड़ता था। एक उपासिक नामक व्यक्ति ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया था परन्तु फिर भी वह ब्राह्मण ही कहलाता था।

साहित्य एवं कला: इस काल में साहित्य एवं कला को भी प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। प्राकृत भाषा को बढ़ावा दिया गया। गाथा सप्तशती, बृहत्कथा इस युग की रचनायें हैं। 'कातंत्र' भी इसी समय की कृति मानी गई है। इसके अतिरिक्त वैदिक दर्शन तथा ज्योतिष पर भी साहित्य लिखा गया। इस काल की बौद्ध कलाकृतियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। कई लयन तथा चैत्यगृहों का निर्माण इस समय हुआ। लयन में एक विशाल कमरा बना होता था तथा उसके चारों ओर छोटे-छोटे कमरे होते थे जिनमें एक-एक पत्थर की बेंच भिक्षुओं के शयन के लिए बनी होती थी। चैत्यगृह के महाद्वार छत तथा खिड़कियाँ बनी होती थी। प्रत्येक चैत्य में एक आंगन

और उसके चारों ओर संकीर्ण बरामदे होते थे तथा एक छोटा स्तूप भी होता था। भरहुत, सांची, अमरावती और नागार्जुनीकोण्ड में इस काल की कला के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत हैं।

मायनों में सातवाहनों का शासन प्रबंध मौर्यों के शासन प्रबन्ध से मिलता-जुलता था। सातवाहन काल में कुछ बातें जिनका विवरण सम्राट अशोक के अभिलेखों से हमें मिलता है। हम इस प्रकार पाते हैं कि सातवाहन प्रशासन मौर्य एवं गुप्त प्रशासकों तथा उत्तर एवं दक्षिण के बीच एक महत्वपूर्ण शृंखला है। सातवाहन राजाओं के युग में कला, संस्कृति, व्यापार इत्यादि की आशातीत प्रगति हुई। आर्थिक जीवन, लोगों की मुख्य जीविका तो अब भी खेती ही थी परन्तु आन्ध्रों के लम्बे और सुव्यवस्थित शासनकाल में उद्योग और व्यापार की बड़ी उन्नति हुई। बहुत से व्यवसायवालों ने अपनी-अपनी सामूहिक संस्थाएँ या श्रेणियाँ बना ली थीं जैसे धान्यिक (अनाज के व्यवसायी) कुम्हार, कोलिक निकाय अथवा कोलिक (बुनकर) तिलपिषक (तेली), कासाकार, वंशकार (बाँस का काम करनेवाला) गांधिक (इत्र बनानेवाले) आदि।

देश के विभिन्न प्रदेशों और नगरों को मिलानेवाली सड़क और मार्ग बने हुए थे, जिनसे होकर व्यापार के रास्ते चलते थे और वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था। दक्षिण भारत में पैठन नगर, नासिक, जुन्नार कर्हाटक (करहाड) आदि नगर प्रसिद्ध व्यापार के केन्द्र थे। पश्चिम के देशों से भी व्यापार भी होता था। पश्चिमी तट के प्रसिद्ध बन्दरगाह भड़ौच सोपारा कल्याण आदि थे। व्यापार क्रय-विक्रय और विनिमय के लिए कई प्रकार के सिक्कों का प्रचलन था। सबसे बड़ा सिक्का सुवर्ण था जो चाँदी के पैंतीस कार्षापण के बराबर होता था। उसके नीचे चाँदी के कुषाण नाम का सिक्का था।

उस युग में वैदेशिक व्यापार की भी विशेष उन्नति हुई। मौर्य-वंश के अन्तिम समय में भारत के उत्तर-पश्चिम में यवन राजाओं के साम्राज्य स्थापित हो गये थे। उन राज्यों के द्वारा पश्चिमी संसार से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध और भी सुदृढ़ हो गया। भारतीय पश्चिमी सागर तट के व्यापारियों ने अरब देशों से मिस्र तक के देशों से व्यापार करना आरम्भ कर दिया था। यही नहीं रोम के साथ भी भारत का व्यापार-सम्बन्ध उस युग में स्थापित था, क्योंकि इसी के फलस्वरूप हमें देश के रावलपिंडी, कन्नौज, मिर्जापुर, चुनार, इलाहाबाद आदि के समीपवर्ती स्थानों में हुई खुदाई में रोमन सिक्के उपलब्ध होते रहे हैं। यहाँ से हाथी-दाँत के सुन्दर एवं आकर्षक सामान, मोती, कालीमिर्च, लौंग, मशाले, सुगन्धियाँ, औषधियाँ, रेशमी कपड़े तथा बारीक सुप्रसिद्ध मलमल काफी मात्रा में रोम भेजे जाते थे। मिस्र और रोम के अलावा बर्मा, सुमात्रा, जावा, चम्पा, चीन आदि देशों के साथ भी भारत का विदेशी व्यापार सुदृढ़ था।

डॉ० शंकर जय किशन चौधरी
अतिथि शिक्षक, इतिहास विभाग
डी० बी० कॉलेज, जयनगर